Shree Krishna International Journal of Multidisciplinary Studies
ISSN: xxxx-xxxx (Online)

लोकतंत्र, नागरिक भागीदारी और राष्ट्रहित: 21वीं सदी में सावरकर की वैचारिक प्रासंगिकता

सीतू शुक्ला , शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
प्रो०(डॉ०) आदित्य कुमार सिंह, अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
स्वामी शुकदेवानंद कॉलेज, शाहजहांपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध सार

लोकतंत्र मात्र एक शासन-प्रणाली नहीं बल्कि नागरिक चेतना, सहभागिता और राष्ट्रहित के प्रति उत्तरदायित्व की सम्पूर्ण जीवन-दृष्टि है। 21वीं सदी में, जब वैश्वीकरण, तकनीकी क्रांति, पहचान की राजनीति और राष्ट्र-राज्य की चुनौतियाँ तीव्र हो रही हैं, तब लोकतंत्र की सफलता नागरिकों की सक्रिय भागीदारी और राष्ट्रीय हित के साथ उनके नैतिक संकल्प पर निर्भर करती है। इस संदर्भ में वीर विनायक दामोदर सावरकर की वैचारिक प्रासंगिकता का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है। सावरकर का राष्ट्रवाद भावनात्मक या संकीर्ण न होकर सक्रिय, तर्कसंगत और कर्तव्य प्रधान है। वे स्वतंत्रता को केवल अधिकारों की प्राप्ति तक ही सीमित नहीं रखते है, बल्कि राष्ट्रीय दायित्वों के निर्वहन से जोड़कर देखते थे। उनके अनुसार लोकतंत्र तभी सशक्त हो सकता है जब नागरिक केवल मतदाता न रहकर राष्ट्रनिर्माण की प्रक्रिया में सहभागी बनें। आज के संदर्भ में यह विचार नागरिक उदासीनता, राजनीतिक निष्क्रियता और केवल अधिकार-आधारित विमर्श की सीमाओं को उजागर करता है।

21वीं सदी में लोकतंत्र की सफलता केवल संस्थागत संरचनाओं पर नहीं बल्कि जागरूक नागरिक भागीदारी और राष्ट्रहित के प्रति प्रतिबद्धता पर निर्भर करती है। इस संदर्भ में वीर सावरकर के विचार लोकतंत्र को केवल शासन पद्धति नहीं बल्कि नागरिक कर्तव्य और राष्ट्रीय चेतना से जोड़कर देखने की दृष्टि प्रदान करते हैं। यद्यपि सावरकर को प्रायः राजनीतिक राष्ट्रवाद के संदर्भ में देखा गया है किंतु लोकतंत्र और नागरिक सहभागिता के प्रति उनकी वैचारिक दृष्टि पर तुलनात्मक और समकालीन अध्ययन अपेक्षाकृत सीमित है, यह शोध इस वैचारिक रिक्तता को भरने का प्रयास करता है।

कुंजी शब्द
नागरिक भागीदारी, लोकतंत्र, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, राष्ट्रहित, वीर सावरकर

सीतू शुक्ला
Seetu121@gmail.com

प्रो०(डॉ०) आदित्य कुमार सिंह
adityassc@gmail.com

Paper Received: 23/04/2026
Paper Revised: ---------
Paper Accepted: 28/04/2026

शोध उद्देश्य

1. वीर सावरकर के लोकतांत्रिक चिंतन का सैद्धांतिक एवं वैचारिक विश्लेषण करना।

2. नागरिक भागीदारी की अवधारणा को सावरकर के विचारों के संदर्भ में समझना तथा लोकतंत्र में उसकी भूमिका का मूल्यांकन करना।

3. राष्ट्रहित की संकल्पना को सावरकर के विचार-दर्शन में स्थापित करना और उसके समकालीन निहितार्थों का अध्ययन करना।

4. 21वीं सदी के भारतीय लोकतंत्र के संदर्भ में सावरकर की वैचारिक प्रासंगिकता का आलोचनात्मक विश्लेषण करना।

5. लोकतंत्र, नागरिक कर्तव्य एवं राष्ट्रहित के परस्पर संबंधों को सावरकर के चिंतन के आलोक में स्पष्ट करना।

लोकतंत्र आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था का वह स्वरूप है, जिसमें सत्ता का मूल स्रोत जनता मानी जाती है। "जनता का, जनता द्वारा और जनता के लिए शासन" लोकतंत्र की मूल अभिव्यक्ति है। लोकतंत्र केवल चुनाव तक सीमित नहीं है, बल्कि यह निरंतर नागरिक भागीदारी, सजगता और राष्ट्रहित के प्रति प्रतिबद्धता की मांग करता है। नागरिक भागीदारी लोकतंत्र को जीवंत बनाती है और राष्ट्रहित उस दिशा को निर्धारित करता है, जिससे यह भागीदारी संचालित होनी चाहिए। लोकतंत्र केवल शासन की एक पद्धति नहीं, बल्कि नागरिक चेतना, सहभागिता और राष्ट्रहित के प्रति उत्तरदायित्व की सामूहिक प्रक्रिया है। आधुनिक विश्व में लोकतंत्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि नागरिक कितनी सक्रियता से शासन, समाज और राष्ट्रनिर्माण की प्रक्रिया में भाग लेते हैं। 21वीं सदी में, जब लोकतंत्र अनेक चुनौतियों जैसे राजनीतिक उदासीनता, नैतिक पतन, राष्ट्रविरोधी विचारधाराएँ, और वैश्वीकरण के दबाव से जूझ रहा है, तब भारतीय चिंतन परंपरा के विचारकों का पुनर्मूल्यांकन अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

वीर विनायक दामोदर सावरकर ऐसे ही विचारक थे, जिन्होंने राष्ट्र, नागरिक कर्तव्य, लोकतंत्र और सामाजिक चेतना को एक व्यापक वैचारिक ढाँचे में प्रस्तुत किया। सावरकर का चिंतन केवल स्वतंत्रता आंदोलन तक सीमित नहीं था, उसका उद्देश्य एक जागरूक, साहसी और राष्ट्रनिष्ठ नागरिक समाज की कल्पना करता था। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य 21वीं सदी के संदर्भ में लोकतंत्र, नागरिक भागीदारी और राष्ट्रहित के परिप्रेक्ष्य में सावरकर की वैचारिक प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है।

लोकतंत्र का मूल तत्व "जनसत्ता" है, जिसमें शासन की शक्ति जनता से निकलकर जनता के लिए प्रयुक्त होती है। भारतीय लोकतंत्र की जड़ें केवल आधुनिक संविधान में नहीं, बल्कि प्राचीन सभाओं, गणराज्यों और सामाजिक उत्तरदायित्व की परंपरा में भी निहित हैं। स्वतंत्र भारत में लोकतंत्र को संवैधानिक संरचना मिली, किंतु उसकी आत्मा नागरिक चेतना पर निर्भर करती है।

लोकतंत्र केवल राजनीतिक अधिकारों से नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सहभागिता से बना हुआ है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में कानून के समक्ष समानता, अभिव्यक्ति, विचार, संगठन और आंदोलन की स्वतंत्रता, जवाबदेह शासन प्रणाली जैसे मूल्य निहित होते हैं। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में लोकतंत्र बहुलता, सहिष्णुता

और समावेशन पर आधारित है। आज ध्यान देने की बात यह है कि लोकतंत्र को केवल मतदान तक सीमित कर दिया गया है, जबकि वास्तविक लोकतंत्र निरंतर नागरिक भागीदारी की माँग करता है। यहीं पर सावरकर का चिंतन आधुनिक लोकतंत्र को वैचारिक गहराई प्रदान करता है।

सावरकर लोकतंत्र को केवल बहुमत आधारित शासन नहीं मानते थे। उनके अनुसार लोकतंत्र तभी सार्थक है जब राष्ट्र सर्वोपरि हो, नागरिक केवल अधिकारों के उपभोक्ता नहीं, बल्कि कर्तव्यों के वाहक हों, स्वतंत्रता अनुशासन और राष्ट्रनिष्ठा से जुड़ी हो। सावरकर का लोकतंत्र कर्तव्यप्रधान लोकतंत्र है, जिसमें नागरिक राष्ट्र की रक्षा, विकास और सांस्कृतिक एकता के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

नागरिक भागीदारी वह प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से आम नागरिक शासन और नीति-निर्माण में सक्रिय सहभागिता, सामाजिक सुधारों में योगदान, राष्ट्रहित को व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर रखना, कर्तव्यों के प्रति सजग रहता है। 21वीं सदी में नागरिक भागीदारी केवल राजनीतिक ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और वैचारिक स्तर पर भी आवश्यक हो गई है। सोशल मीडिया, डिजिटल प्लेटफॉर्म और वैश्विक संचार ने नागरिकों को शक्तिशाली तो बनाया है, परंतु साथ ही भ्रम, दुष्प्रचार और वैचारिक विघटन की समस्या भी उत्पन्न की है। वर्तमान समय में अनेक स्तरों पर सक्रिय नागरिक भागीदारी दिखाई देती है-

(क) राजनीतिक भागीदारी - मतदान, राजनीतिक दलों या आंदोलनों में सहभागिता, जनप्रतिनिधियों से संवाद

(ख) सामाजिक भागीदारी - स्वैच्छिक संगठनों से जुड़ाव, सामाजिक सुधार आंदोलनों में भागीदारी, स्थानीय समस्याओं के समाधान में योगदान

(ग) आर्थिक और विकासात्मक भागीदारी - स्थानीय विकास योजनाओं में सहयोग, स्वच्छता, शिक्षा, स्वास्थ्य जैसे अभियानों में सक्रियता।

21वीं सदी में नागरिक भागीदारी अक्सर मतदान, सोशल मीडिया अभिव्यक्ति या विरोध प्रदर्शन तक सीमित होती जा रही है। सावरकर इससे आगे जाकर नागरिक को सामाजिक सुधारक, राष्ट्रीय चरित्र का निर्माणकर्ता, संकट में राष्ट्र का रक्षक मानते हैं। उनके अनुसार सच्ची नागरिक भागीदारी तब होती है जब व्यक्ति समाज की कुरीतियों के

विरुद्ध खड़ा हो राष्ट्र की सुरक्षा और एकता को व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर रखे। केवल मांगने वाला नहीं, बल्कि देने वाला नागरिक बने।

नागरिक भागीदारी के प्रश्न पर सावरकर का दृष्टिकोण विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। वे सामाजिक सुधार, शिक्षा, सैन्य चेतना, स्वावलंबन और संगठन को लोकतांत्रिक सशक्तिकरण के मूल आधार मानते थे। 21वीं सदी में डिजिटल लोकतंत्र, सोशल मीडिया सक्रियता और जन-आंदोलनों के युग में सावरकर का यह विचार और भी प्रासंगिक हो जाता है कि सहभागिता केवल विरोध या अभिव्यक्ति तक सीमित न होकर रचनात्मक योगदान में परिवर्तित होनी चाहिए।

नागरिक भागीदारी तभी सार्थक मानी जाएगी, जब वह राष्ट्रहित से जुड़ी हो। यदि भागीदारी केवल स्वार्थ, विभाजन या अराजकता को बढ़ावा दे, तो वह लोकतंत्र को कमजोर करती है। राष्ट्रहित से प्रेरित नागरिक भागीदारी लोकतांत्रिक संस्थाओं को सुदृढ़ बनाती है और राष्ट्रीय नीतियों को स्थायित्व देती है, समाज में अनुशासन और उत्तरदायित्व विकसित करती है। डिजिटल युग ने नागरिक भागीदारी के स्वरूप को बदल दिया है सोशल मीडिया के माध्यम से जनमत निर्माण, ऑनलाइन याचिकाएँ और जन-अभियान, ई-गवर्नेंस और पारदर्शिता आई है। किन्तु इसके साथ फेक न्यूज, ध्रुवीकरण और भावनात्मक राजनीति जैसी चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। ऐसे में राष्ट्रहित-आधारित विवेकपूर्ण नागरिक भागीदारी की आवश्यकता और बढ़ जाती है।

आधुनिक लोकतंत्र में अधिकारों की चर्चा तो व्यापक है, पर कर्तव्यों की उपेक्षा है। सावरकर का लोकतंत्र अधिकार और कर्तव्य में संतुलन, स्वतंत्रता के साथ अनुशासन, विविधता में सांस्कृतिक एकता पर आधारित है, जो 21वीं सदी के लोकतंत्र को स्थायित्व प्रदान कर सकता है।

आलोचनात्मक दृष्टि से सावरकर के विचारों पर यह आरोप लगाया जाता है कि उनका राष्ट्रवाद कठोर है, अल्पसंख्यक दृष्टिकोण को पर्याप्त स्थान नहीं देता। परंतु सत्य यह है कि सावरकर का लक्ष्य सांस्कृतिक राष्ट्र की सुरक्षा था, न कि लोकतांत्रिक अधिकारों का दमन। उनके विचारों को ऐतिहासिक संदर्भ में समझना आवश्यक है।

वीर सावरकर - राष्ट्रवाद और नागरिक दृष्टिकोण

वीर सावरकर का राष्ट्रवाद भावनात्मक नहीं, बल्कि सक्रिय, तार्किक और कर्तव्य-प्रधान था। वे मानते थे कि - "राष्ट्र केवल भू-भाग नहीं, बल्कि साझा इतिहास, संस्कृति, स्मृति और भविष्य की सामूहिक चेतना है।" सावरकर के अनुसार नागरिक का कर्तव्य है कि वह राष्ट्र के लिए सोचे, बोले और कार्य करे। उनका आदर्श नागरिक केवल अधिकारों की माँग करने वाला नहीं, बल्कि राष्ट्रनिर्माण में योगदान देने वाला है। सावरकर कर्तव्य-केंद्रित लोकतंत्र की वकालत करते हैं। उनका मानना था कि अधिकार तभी सार्थक हैं जब नागरिक अपने कर्तव्यों का पालन करे। कर्तव्यहीन स्वतंत्रता राष्ट्र को कमजोर बनाती है।

अनुशासन और राष्ट्रनिष्ठा लोकतंत्र के शत्रु नहीं, बल्कि संरक्षक हैं। 21वीं सदी में, जब लोकतंत्र "अधिकार बनाम कर्तव्य" के असंतुलन से ग्रस्त है, तब सावरकर का यह विचार अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है।

लोकतंत्र तभी सशक्त होता है, जब नागरिक केवल अधिकारों के प्रति जागरूक न हों, बल्कि कर्तव्यों के प्रति भी सजग रहें। यदि नागरिक निष्क्रिय हो जाएँ, तो लोकतंत्र औपचारिक बनकर रह जाता है। सक्रिय नागरिक सत्ता पर नियंत्रण रखते हैं, भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज उठाते हैं, नीतियों को जनोन्मुख बनाते हैं। इस प्रकार नागरिक भागीदारी लोकतंत्र की प्राणवायु है।

राष्ट्रहित - सावरकर का दृष्टिकोण

राष्ट्रहित से तात्पर्य उस व्यापक हित से है, जो व्यक्तिगत, वर्गीय या तात्कालिक स्वार्थों से ऊपर होता है। इसमें राष्ट्रीय एकता और अखंडता, सामाजिक सद्भाव, आर्थिक आत्मनिर्भरता, सांस्कृतिक संरक्षण, सुरक्षा और संप्रभुता जैसे तत्व सम्मिलित हैं। राष्ट्रहित लोकतंत्र की नैतिक दिशा तय करता है।

राष्ट्रहित की अवधारणा में सावरकर की सोच दीर्घकालिक और समग्र थी। वे सांस्कृतिक एकता, राजनीतिक संप्रभुता और सामाजिक समरसता को राष्ट्रहित के अनिवार्य तत्व मानते थे। 21वीं सदी में, जब लोकतंत्र अक्सर ध्रुवीकरण, पहचान-आधारित संघर्ष और तात्कालिक राजनीतिक लाभों से प्रभावित होता है, तब सावरकर का राष्ट्रहित-आधारित दृष्टिकोण लोकतांत्रिक विमर्श को संतुलन प्रदान करता है। उनकी दृष्टि लोकतंत्र को केवल संख्याबल का खेल न मानकर राष्ट्रीय हितों से संचालित नैतिक व्यवस्था के रूप में देखती है। वे मानते थे कि राष्ट्रहित किसी एक वर्ग, जाति या पंथ तक सीमित नहीं, राष्ट्रहित का अर्थ है- सामूहिक सुरक्षा, सांस्कृतिक संरक्षण और राजनीतिक स्वतंत्रता, राष्ट्रविरोधी गतिविधियों के प्रति सहिष्णुता लोकतंत्र को कमजोर करती है। आज, जब राष्ट्रहित की अवधारणा को संकीर्ण या विवादास्पद बना दिया गया है, सावरकर का स्पष्ट और निर्भीक राष्ट्रवाद मार्गदर्शन प्रदान करता है।

सावरकर के लिए राष्ट्रहित, राजनीतिक स्वतंत्रता, सांस्कृतिक एकता, सैन्य और आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक समरसता का समन्वय था। वे मानते थे कि यदि लोकतंत्र राष्ट्रहित से कट जाए, तो वह अराजकता में बदल सकता है। इसलिए राष्ट्रहित लोकतंत्र की दिशा तय करने वाला नैतिक आधार होना चाहिए।

21वीं सदी - चुनौतियाँ और सावरकर की प्रासंगिकता

आज का लोकतंत्र अनेक चुनौतियों से जूझ रहा है। राजनीतिक ध्रुवीकरण, राष्ट्रविरोधी विचारधाराओं का प्रसार, अधिकार-केन्द्रित राजनीति, नागरिक कर्तव्यों का ह्रास, इन परिस्थितियों में सावरकर का यह विचार अत्यंत प्रासंगिक है कि "राष्ट्र पहले, व्यक्ति बाद में, पर व्यक्ति राष्ट्र के बिना नहीं।" उनका राष्ट्रवाद लोकतंत्र का विरोधी नहीं, बल्कि उसका संरक्षक है।

आज का नागरिक राजनीति से दूरी बना रहा है। सावरकर इसके विरुद्ध सक्रिय नागरिकता का संदेश देते हैं। सावरकर सांस्कृतिक चेतना को राष्ट्र की आत्मा मानते थे, जो आज वैश्वीकरण के दौर में अत्यंत आवश्यक है। सावरकर का अनुशासन-आधारित राष्ट्रवाद आज भी लोकतांत्रिक अराजकता का समाधान प्रस्तुत करता है।

यह भ्रांति है कि सावरकर लोकतंत्र विरोधी थे। वास्तव में वे कमजोर लोकतंत्र के आलोचक थे, राष्ट्रविरोधी स्वतंत्रता के विरोधी थे, वे सशक्त, अनुशासित और राष्ट्रनिष्ठ लोकतंत्र के समर्थक थे। 21वीं सदी का भारत "सशक्त लोकतंत्र" की ओर अग्रसर है, जहाँ सावरकर का चिंतन वैचारिक आधार प्रदान करता हैं। यहाँ आवश्यक है कि सावरकर के विचारों का अध्ययन आलोचनात्मक संतुलन के साथ किया जाए। उनके कुछ विचार ऐतिहासिक परिस्थितियों से जुड़े थे, किंतु नागरिक चेतना, राष्ट्रहित और कर्तव्यबोध जैसे तत्व कालातीत हैं।

निष्कर्ष

लोकतंत्र केवल शासन प्रणाली नहीं, बल्कि एक सतत सामाजिक प्रक्रिया है। नागरिक भागीदारी इसके संचालन का माध्यम है और राष्ट्रहित इसकी दिशा। जब नागरिक जागरूक, सक्रिय और राष्ट्रहित के प्रति प्रतिबद्ध होते हैं, तब लोकतंत्र सशक्त, स्थायी और जनकल्याणकारी बनता है।

इसलिए, एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण के लिए लोकतंत्र, नागरिक भागीदारी और राष्ट्रहित तीनों का संतुलित और समन्वित विकास अनिवार्य है। लोकतंत्र की सफलता केवल संस्थाओं से नहीं, बल्कि सजग नागरिकों से तय होती है। वीर सावरकर का चिंतन 21वीं सदी के लोकतंत्र को राष्ट्रहित से जोड़ता है, नागरिक भागीदारी को कर्तव्य के रूप में स्थापित कर, लोकतंत्र को वैचारिक मजबूती प्रदान करता है। इस प्रकार, सावरकर केवल अतीत के क्रांतिकारी नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के वैचारिक मार्गदर्शक हैं।

21वीं सदी में लोकतंत्र की सफलता नागरिकों की जागरूक भागीदारी और राष्ट्रहित के प्रति प्रतिबद्धता पर निर्भर है। वीर सावरकर का चिंतन हमें यह सिखाता है कि लोकतंत्र अधिकारों से नहीं, कर्तव्यों से मजबूत होता है, नागरिक की शक्ति राष्ट्र निर्माण में निहित है राष्ट्रहित लोकतंत्र का नैतिक आधार है। इस प्रकार सावरकर की वैचारिक प्रासंगिकता आज भी लोकतंत्र को दिशा देने वाली, नागरिक चेतना को जागृत करने वाली और राष्ट्रहित को केंद्र में रखने वाली है।

सन्दर्भ

1. सावरकर, वी.डी. (1969) हिंदुत्वः हिंदू कौन है? बम्बई, वीर सावरकर प्रकाशन
2. सावरकर, वी.डी. (1989) भारतीय इतिहास के छह गौरवशाली युग, बम्बई, वीर सावरकर प्रकाशन
3. जाफरलॉट, सी. (1996) भारत में हिंदू राष्ट्रवादी आंदोलन, नई दिल्ली, पेंगुइन बुक्स
4. चंद्रा, बी. (2009) स्वतंत्रता के लिए भारत का संघर्ष, नई दिल्ली, पेंगुइन बुक्स
5. पणिक्कर, के.एन. (2013) संस्कृति, विचारधारा, आधिपत्य, नई दिल्ली, तूलिका बुक्स
6. मोडक, डॉ अशोक (2024) सावरकर विचार की प्रासंगिकता, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, भारत, पृ संख्या 175-176
7. माहुरकर,उदय एवं पण्डित चिरायु (2024) वीर सावरकर जो भारत का विभाजन रोक सकते थे और उनकी राष्ट्रीय सुरक्षा दृष्टि, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, भारत, पृ संख्या 143-145